Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका और सामाजिक चुनौतियाँ: एक व्यापक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. सोनिका बघेल*

* सहा. प्राध्यापक (समाज शास्त्र) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – आधुनिक भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुआ है। शिक्षा, औद्योगीकरण, नगरीकरण, वैश्वीकरण तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के विस्तार ने महिलाओं को सार्वजनिक एवं आर्थिक क्षेत्र में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्रदान किया है। महिलाएँ आज प्रशासन, शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, सूचना-प्रौद्योगिकी, बैंकिंग, राजनीति एवं सेवा क्षेत्र सहित विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। तथापि सामाजिक संरचना में घरेलू कार्यों एवं पारिवारिक दायित्वों की प्रमुख जिम्मेदारी अब भी महिलाओं पर केंद्रित है। परिणामस्वरूप कार्यरत महिलाओं को दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है-एक ओर वे पेशेवर उत्तारदायित्वों का निर्वहन करती हैं, दूसरी ओर पारिवारिक एवं घरेलू दायित्वों को भी निभाती हैं।

यह लेख कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका, भूमिका-संघर्ष, मानसिक एवं शारीरिक प्रभाव, पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव, सामाजिक असमानता, ग्रामीण-शहरी परिप्रेक्ष्य तथा समाधान की संभावनाओं का विस्तृत समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आर्थिक सशक्तिकरण के बावजूद लैंगिक भूमिकाओं की पारंपरिक संरचना महिलाओं के लिए अनेक चुनौतियाँ उत्पन्न करती है। सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन, संस्थागत सहयोग और घरेलू उत्तारदायित्वों के समान वितरण के बिना महिलाओं की वास्तविक समानता संभव नहीं है।

शब्द कुंजी – कार्यरत महिलाएँ, दोहरी भूमिका, भूमिका-संघर्ष, पितृसत्ता, कार्य-जीवन संतुलन, लैंगिक समानता।

प्रस्तावना – भारतीय समाज परंपरागत रूप से पितृसत्तात्मक संरचना पर आधारित रहा है। इस व्यवस्था में पुरुष को आर्थिक उत्तरदायित्वों का निर्वाहक तथा महिला को घरेलू कार्यों का संचालक माना गया। महिलाओं की भूमिका मुख्यत: परिवार, बच्चों के पालन-पोषण एवं गृह-प्रबंधन तक सीमित रही।

किन्तु 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों ने महिलाओं की स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव लाया। शिक्षा के प्रसार, महिला अधिकार आंदोलनों, संवैधानिक प्रावधानों, औद्योगिक विकास और रोजगार के अवसरों की वृद्धि ने महिलाओं को आर्थिक क्षेत्र में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया।

आज महिलाएँ केवल घरेलू क्षेत्र तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। तथापि घरेलू कार्यों का विभाजन अभी भी लैंगिक आधार पर असमान है। फलस्वरूप कार्यरत महिलाओं के समक्ष दोहरी जिम्मेदारियों का बोझ उपस्थित है, जो सामाजिक, मानसिक एवं पारिवारिक स्तर पर अनेक चुनौतियाँ उत्पन्न करता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य – प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत सम्मानजनक मानी जाती थी, किंतु मध्यकाल में सामाजिक रूढ़ियों और प्रतिबंधों के कारण उनकी स्वतंत्रता सीमित हो गई। औपनिवेशिक काल में सामाजिक सुधार आंदोलनों ने महिला शिक्षा और अधिकारों की दिशा में पहल की।

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान ने महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किए। शिक्षा का प्रसार और आर्थिक विकास ने महिलाओं को रोजगार के अवसर प्रदान किए। धीरे-धीरे महिलाओं की कार्यभागीदारी बढ़ी, किंतु सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन अपेक्षाकृत धीमा रहा। इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका को समझना आवश्यक है।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य – कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका को समझने के लिए विभिन्न समाजशास्त्रीय सिद्धांतों का विश्लेषण आवश्यक है। ये सिद्धांत न केवल भूमिका-संघर्ष की प्रकृति को स्पष्ट करते हैं, बल्कि सामाजिक संरचना, शक्ति-संबंधों, लैंगिक विभाजन और सांस्कृतिक मान्यताओं को भी उजागर करते हैं। निम्नलिखित प्रमुख सैद्धांतिक दृष्टिकोण इस विषय की गहन व्याख्या प्रस्तुत करते हैंकृ

भूमिका सिद्धांत – भूमिका सिद्धांत के अनुसार समाज में प्रत्येक व्यक्ति एक निश्चित स्थिति (Status) रखता है, और उस स्थिति से जुड़ी अपेक्षाएँ उसकी भूमिका (Role) निर्धारित करती हैं। जब व्यक्ति को एक साथ अनेक भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है और उन भूमिकाओं की अपेक्षाएँ परस्पर विरोधी हो जाती हैं, तब भूमिका-संघर्ष (Role Conflict) उत्पन्न होता है।

कार्यरत महिला के संदर्भ में

1. पारिवारिक भूमिका (माँ, पत्नी, बहू)
2. पेशेवर भूमिका (कर्मचारी, अधिकारी, शिक्षिका आदि)

दोनों भूमिकाओं की अपेक्षाएँ अक्सर एक-दूसरे से टकराती हैं। उदाहरणत: यदि कार्यालय में अतिरिक्त समय तक कार्य करना आवश्यक हो, परंतु उसी समय बच्चे की देखभाल की आवश्यकता हो, तो महिला के सामने दुविधा उत्पन्न होती है।

भूमिका सिद्धांत यह भी बताता है कि लगातार भूमिका-संघर्ष की स्थिति मानसिक तनाव, थकान और असंतोष को जन्म देती है। इस प्रकार कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका सामाजिक अपेक्षाओं की असमान संरचना का परिणाम है।

नारीवादी दृष्टिकोण – नारीवादी समाजशास्त्र महिलाओं की दोहरी भूमिका को पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था का परिणाम मानता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार:

1. समाज में श्रम का विभाजन लैंगिक आधार पर किया गया है।
2. घरेलू कार्यों को 'प्राकृतिक' रूप से महिला का दायित्व माना गया।
3. घरेलू श्रम को आर्थिक मूल्य नहीं दिया जाता, जबकि वह परिवार की आधारशिला है।

नारीवादी विचारधारा यह तर्क देती है कि कार्यरत महिला घर और बाहर दोनों स्थानों पर श्रम करती है, किंतु उसे समान सामाजिक मान्यता नहीं मिलती।

उदारवादी नारीवाद – समान अवसर, शिक्षा और कानूनी अधिकारों पर बल देता है।

कट्टरपंथी नारीवाद – पितृसत्ता को असमानता का मूल कारण मानता है।

समाजवादी नारीवाद – आर्थिक संरचना और वर्गीय असमानता को भी लैंगिक असमानता से जोड़ता है।

इन सभी दृष्टिकोणों के अनुसार दोहरी भूमिका सामाजिक संरचना की असमानता का द्योतक है।

संरचनात्मक-कार्यात्मक सिद्धांत – इस सिद्धांत के अनुसार समाज विभिन्न अंगों से मिलकर बना एक तंत्र है, जहाँ प्रत्येक अंग का एक विशिष्ट कार्य (Function) होता है। पारंपरिक समाज में:

1. पुरुष को बाहरी आर्थिक गतिविधियों के लिए उपयुक्त माना गया।
2. महिला को घरेलू कार्यों और बच्चों के पालन-पोषण के लिए।

यह विभाजन सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक समझा गया।

किन्तु आधुनिक समाज में जब महिलाएँ भी आर्थिक गतिविधियों में संलग्न हो गईं, तब यह पारंपरिक विभाजन असंतुलित हो गया। परिणामस्वरूप महिलाओं पर दोहरी जिम्मेदारी का भार बढ़ा।

इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो सामाजिक संरचना में परिवर्तन के अनुरूप भूमिकाओं का पुनर्वितरण आवश्यक है।

संघर्ष सिद्धांत – संघर्ष सिद्धांत, विशेषकर मार्क्सवादी दृष्टिकोण, समाज को शक्ति और संसाधनों के असमान वितरण के आधार पर समझता है। कार्यरत महिलाओं के संदर्भ में:

1. आर्थिक संसाधनों पर पुरुषों का ऐतिहासिक नियंत्रण
2. कार्यस्थलों पर नेतृत्व पदों में पुरुषों का वर्चस्व
3. वेतन असमानता

ये सभी शक्ति-संघर्ष की अभिव्यक्ति हैं।

संघर्ष सिद्धांत के अनुसार महिलाओं की दोहरी भूमिका पूँजीवादी व्यवस्था और पितृसत्तात्मक संरचना के संयुक्त प्रभाव का परिणाम है, जहाँ महिलाएँ घर में 'अवैतनिक श्रम' और बाहर 'कम वेतन' दोनों स्थितियों का सामना करती हैं।

प्रतीकात्मक अंत:क्रियावाद – यह दृष्टिकोण सूक्ष्म स्तर पर सामाजिक अंत:क्रियाओं को महत्व देता है।

समाज में 'अच्छी माँ', 'समर्पित पत्नी' और 'सफल कर्मचारी' जैसी अवधारणाएँ सांस्कृतिक प्रतीकों के रूप में स्थापित हैं। कार्यरत महिला इन सभी प्रतीकों के अनुरूप स्वयं को ढालने का प्रयास करती है।

यदि वह किसी एक भूमिका में अपेक्षित प्रदर्शन नहीं कर पाती, तो उसे सामाजिक आलोचना या आत्मग्लानि का अनुभव होता है।

इस प्रकार दोहरी भूमिका केवल संरचनात्मक समस्या ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अर्थों और सामाजिक अपेक्षाओं से भी जुड़ी है।

सामाजिक निर्माणवाद – यह सिद्धांत बताता है कि लैंगिक भूमिकाएँ जैविक नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से निर्मित (Socially Constructed) होती हैं।

समाज बचपन से ही लड़कों और लड़कियों को अलग-अलग प्रकार के व्यवहार सिखाता है:

1. लड़कियों को गृहकार्य और देखभाल की भूमिका।
2. लड़कों को बाहरी कार्य और नेतृत्व की भूमिका।

इस सामाजिक निर्माण के कारण जब महिलाएँ कार्यक्षेत्र में प्रवेश करती हैं, तब भी उनसे घरेलू कार्यों की अपेक्षा समाप्त नहीं होती।

उत्तर-आधुनिक दृष्टिकोण – उत्तर-आधुनिक समाज में पहचान (Identity) बहुआयामी हो गई है। महिला अब केवल 'गृहिणी' या 'कर्मचारी' नहीं, बल्कि एक साथ कई पहचानों का वहन करती है।

यह दृष्टिकोण मानता है कि आधुनिक जीवन में भूमिकाओं की विविधता बढ़ी है, जिससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता तो बढ़ती है, किंतु जटिलता और तनाव भी बढ़ता है।

समेकित विश्लेषण – उपरोक्त सभी सैद्धांतिक दृष्टिकोण यह स्पष्ट करते हैं कि:

1. कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका केवल व्यक्तिगत समस्या नहीं है।
2. यह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मान्यताओं, आर्थिक असमानताओं और शक्ति-संबंधों का परिणाम है।
3. समाधान के लिए केवल व्यक्तिगत प्रयास पर्याप्त नहीं, बल्कि संरचनात्मक एवं संस्थागत परिवर्तन आवश्यक हैं।

अत: कार्यरत महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए बहुआयामी सैद्धांतिक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिससे सामाजिक यथार्थ का समग्र विश्लेषण किया जा सके।

कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका की प्रकृति – कार्यरत महिला को प्रतिदिन निम्न प्रकार की जिम्मेदारियों का सामना करना पड़ता है:

1. पेशेवर दायित्व – समय-सीमा, लक्ष्य-पूर्ति, कार्य-दबाव, प्रतिस्पर्धा।
2. घरेलू दायित्व – भोजन, सफाई, बच्चों की शिक्षा, बुजुर्गों की देखभाल।
3. सामाजिक दायित्व – रिश्तेदारी, सामाजिक समारोह, सांस्कृतिक अपेक्षाएँ।

इन सभी दायित्वों के समन्वय में समय प्रबंधन की समस्या प्रमुख होती है।

प्रमुख सामाजिक चुनौतियाँ

कार्य-जीवन संतुलन- कार्यरत महिलाएँ अक्सर कार्यस्थल और घर के बीच संतुलन स्थापित करने में कठिनाई अनुभव करती हैं। लंबे कार्य-घंटे, आवागमन की समस्या और घरेलू अपेक्षाएँ उन्हें विश्राम का पर्याप्त समय नहीं देतीं।

मानसिक एवं भावनात्मक तनाव – लगातार जिम्मेदारियों के कारण तनाव, चिंता और अवसाद की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। कई महिलाएँ

'सुपरवुमन' बनने के सामाजिक दबाव में स्वयं की आवश्यकताओं की उपेक्षा कर देती हैं।

शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव – अनियमित दिनचर्या, पर्याप्त विश्राम की कमी और पोषण की उपेक्षा स्वास्थ्य समस्याओं को जन्म देती है।

लैंगिक भेदभाव – कार्यस्थल पर वेतन असमानता, पदोन्नति में बाधा, नेतृत्व भूमिकाओं में कम प्रतिनिधित्व और यौन उत्पीड़न जैसी समस्याएँ महिलाओं के पेशेवर विकास को प्रभावित करती हैं।

सामाजिक रूढ़ियाँ – समाज में अब भी यह धारणा प्रचलित है कि बच्चों की देखभाल और गृह-प्रबंधन महिला की प्राथमिक जिम्मेदारी है। यदि परिवार में किसी प्रकार की कमी हो, तो दोष प्राय: महिला को दिया जाता है।

पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव

सकारात्मक प्रभाव:

1. आर्थिक स्थिरता
2. बच्चों के लिए बेहतर अवसर
3. महिला की निर्णय-क्षमता में वृद्धि

नकारात्मक प्रभाव:

1. समय की कमी
2. वैवाहिक तनाव
3. पीढ़ीगत मतभेद

यदि पति और अन्य सदस्य सहयोगी हों, तो दोहरी भूमिका का दबाव कम हो सकता है।

ग्रामीण एवं शहरी संदर्भ

शहरी क्षेत्र – शहरी क्षेत्रों में महिलाएँ औपचारिक क्षेत्र में अधिक कार्यरत हैं। यहाँ प्रतिस्पर्धा, समय-सीमा और कार्य-दबाव अधिक होता है, किंतु सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं।

ग्रामीण क्षेत्र – ग्रामीण महिलाएँ कृषि, पशुपालन और घरेलू उद्योगों में कार्य करती हैं। उनका श्रम प्राय: अनौपचारिक और अवैतनिक होता है। उन्हें घरेलू कार्यों के साथ खेतों में भी श्रम करना पड़ता है, जिससे दोहरी भूमिका और भी कठोर हो जाती है।

सामाजिक-आर्थिक प्रभाव – कार्यरत महिलाओं की बढ़ती भागीदारी से:

1. परिवार की आय में वृद्धि होती है।
2. गरीबी में कमी आती है।
3. बच्चों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य में सुधार होता है।
4. महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिलता है।

किन्तु यदि सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन न हो, तो आर्थिक प्रगति के बावजूद महिलाओं पर कार्यभार असंतुलित बना रहता है।

नीतिगत एवं संस्थागत उपाय

पारिवारिक स्तर पर

1. घरेलू कार्यों का समान विभाजन
2. भावनात्मक सहयोग
3. निर्णय प्रक्रिया में समान भागीदारी

कार्यस्थल स्तर पर

1. लचीला कार्य समय
2. वर्क फ्रॉम होम विकल्प
3. पितृत्व अवकाश
4. सुरक्षित कार्य वातावरण

सामाजिक स्तर पर

1. लैंगिक समानता पर शिक्षा
2. मीडिया में सकारात्मक प्रस्तुति
3. रूढ़ियों का परित्याग

सरकारी स्तर पर

1. महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन
2. कौशल विकास कार्यक्रम
3. क्रेच और डे-केयर सुविधाएँ

चर्चा – कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका आधुनिक सामाजिक परिवर्तन की जटिलता को दर्शाती है। यह स्थिति एक ओर महिला सशक्तिकरण का संकेत है, तो दूसरी ओर सामाजिक असमानता की निरंतरता को भी उजागर करती है।

यदि घरेलू कार्यों का समान वितरण, सामाजिक समर्थन और संस्थागत सहयोग सुनिश्चित किया जाए, तो महिलाओं की दोहरी भूमिका संतुलित हो सकती है। सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन के बिना केवल कानूनी प्रावधान पर्याप्त नहीं होंगे।

निष्कर्ष – कार्यरत महिलाओं की दोहरी भूमिका आधुनिक भारतीय समाज की एक महत्वपूर्ण सामाजिक वास्तविकता है। महिलाएँ आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सक्रिय योगदान दे रही हैं, किंतु पारंपरिक अपेक्षाएँ उन्हंप अतिरिक्त दायित्वों से मुक्त नहीं करतीं।

भूमिका-संघर्ष, मानसिक तनाव और सामाजिक दबाव उनके जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। अत: आवश्यक है कि समाज में लैंगिक समानता को व्यवहारिक रूप से स्वीकार किया जाए, घरेलू कार्यों का समान वितरण हो और कार्यस्थलों पर न्यायपूर्ण वातावरण सुनिश्चित किया जाए। महिलाओं को केवल दोहरी जिम्मेदारी निभाने वाली नहीं, बल्कि समान अधिकार और सम्मान की पात्र नागरिक के रूप में स्वीकार करना ही वास्तविक सामाजिक प्रगति का संकेत होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नीरा देसाई . (1957). आधुनिक भारत में महिलाएँ, वोरा एंड कंपनी पब्लिशर्स।
2. एंथोनी गीडीन्स. (2013). समाजशास्त्र (7वाँ संस्करण), पॉलिटी प्रेस।
3. भारत सरकार. (1974). समानता की ओर: भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति की रिपोर्ट, शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय।
4. शर्मा, आर. (2005). कार्यरत महिलाएँ और भूमिका संघर्ष, जर्नल ऑफ सोशल रिसर्च, 12(2), 45-58.
5. . भारत सरकार. (1950). भारतीय संविधान, भारत सरकार प्रेस।
6. भारत सरकार. (1961/2017). मातृत्व लाभ अधिनियम, भारत सरकार।
7. भारत सरकार. (1976). समान वेतन अधिनियम, भारत सरकार।
8. भारत सरकार. (2013). कार्यस्थल पर महिलाओं का लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोष) अधिनियम, भारत सरकार।
9. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय. (n.d.),वार्षिक रिपोर्ट, भारत सरकार।
10. श्रम एवं रोजगार मंत्रालय. (n.d.). वार्षिक रिपोर्ट, भारत सरकार।